अध्याय 21

लोक संस्कृति

गौरवशाली अतीत, शक्ति, भक्ति, त्याग और तपस्या–स्थली राजस्थान का जितना विविधतापूर्ण प्राकृतिक परिवेश है, उतना ही सरस–सजीला है इसका सांस्कृतिक वैभव। समृद्ध लोक संस्कृति के परिचायक तीज–त्योहार, उमंग व उल्लास के प्रतीक मेले, आस्था और विश्वास के केन्द्र यहां के उपासना स्थल, कहीं घूमर तो कहीं चंग की थाप पर गींदड़, कहीं चकरी तो कहीं भवाई नृत्य के रोमांचक करतब, कहीं गैर नृत्य की गमक तो कहीं विद्युत गति का तेराताली। कहीं अलगोजे की मधुर तान तो कहीं सुरनाई। रंग–बिरंगे राजस्थान की लूंठी–अनूठी सांस्कृतिक विरासत है यहां की लोक संस्कृति। जिसका आकर्षण देशी–विदेशी पर्यटकों को यहां खींच लाता है।

प्रमुख शक्तिपीठ

'पगे–पगे देव अने डगे–डगे देवरा' लोकोक्ति को चरितार्थ करती राजस्थान की धरा कई लोक आस्था केन्द्रों को समेटे हुए हैं। सदियों से ये आस्था स्थल मानव मन की अपूरित मनोकामनाओं को पूर्ण करते आए हैं। ''आ तो सुरगा ने सरमावे, इण पर देव रमण ने आवै, इण रो जस नर नारी गावै।'' पंक्तियाँ राजस्थान की पवित्र धरा को भव्यता प्रदान करती है।

राजस्थान में ऐसे अनेक शक्तिपीठ हैं उनमें से कुछ का वर्णन यहाँ किया जा रहा है–

कैला देवी– पूर्वी राजस्थान का प्रसिद्ध शक्तिपीठ कैला देवी करौली से लगभग 25 किमी की दूरी पर स्थित है। त्रिकुट पर्वत की सुरम्य घाटी में बना कैला देवी का भव्य मंदिर अपने शिल्प और स्थापत्य के कारण दर्शनीय है। कैला देवी महालक्ष्मी के अवतार के रूप में मानी जाती है। मंदिर के पीछे काली सिंध नदी बहती है। मंदिर में महालक्ष्मी तथा चामुण्ड़ा माता की प्रतिमाएँ स्थित है।

कैलादेवी

सफेद संगमरमर से बना यह भव्य मंदिर अपनी लहराती लाल पताकाओं से सफेद और लाल रंगों के सम्मिश्रण का अद्‌भुत दृश्य प्रस्तुत करता है। कैला देवी के सामने हनुमान मंदिर है, जिसे स्थानीय लोग ''लांगुरिया'' कहते हैं। कैला देवी करौली के यदुवंशी राज परिवार की कुल देवी है। चैत्र मास के नवरात्र के दौरान यह आस्था स्थल सजीव हो उठता है। इन दिनों हजारों की संख्या में सुहागिन स्त्रियाँ अपनी पारंपरिक वेशभूषा में माँ कैला देवी की पूजा–अर्चना करने और अपने सुहाग की मंगल कामना के लिए आती हैं। इन दिनों लगने वाले मेले का एक और प्रमुख आकर्षण है, लांगुरिया नृत्य। अलगोजों की धुनों पर लांगुरिया गीत गाते युवक–युवतियों की टोलियाँ मेले के वातावरण को और भी भक्तिमय कर देती है। देवी के चमत्कारों के बारे में आज भी अनेक जनश्रुतियाँ प्रचलित है।

जमवाय माता–जमवाय माता का प्रसिद्ध शक्तिपीठ जयपुर से लगभग 33 किलोमीटर पूर्व

दिशा में जमवा रामगढ़ बाँध के निकट अरावली की सुरम्य पर्वतमाला के बीच एक पहाड़ी नाके पर स्थित है।

जमवाय माता का पौराणिक नाम जामवंती है। पौराणिक मान्यता है कि जम्बू शैल या जम्बूगिरी नामक जिस पर्वत पर जमवाय माता का मंदिर स्थित है, उसकी यात्रा व परिक्रमा अतीव पुण्य फलदायक होती है।

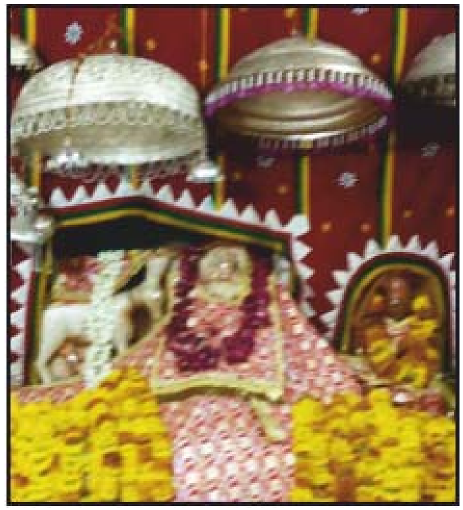
जमवाय माता

कुछ प्राचीन ख्यातों में उल्लेख है कि कछवाहा शासक दूलहराय अपने शत्रुओं से पराजित हो गया तो उसने देवी की आराधना की और जमवाय माता ने प्रसन्न होकर उसे दर्शन दिए। देवी माँ के आशीर्वाद से दूलहराय ने पुनः शत्रु पक्ष पर आक्रमण किया और युद्ध में विजय प्राप्त की। विजय प्राप्ति के बाद दूलहराय ने कुलदेवी जमवाय माता का मंदिर बनवाया, जो अभी तक विद्यमान है। जमवाय माता श्रद्धालुओं की मनौती और मनोकामनाओं को पूर्ण कर उन्हें सुख, शान्ति, समृद्धि और वंशवृद्धि का आशीर्वाद प्रदान करती है। जमवाय माता के चमत्कारों के बारे में आज भी कई जनश्रुतियाँ प्रचलित है।

करणी माता—बीकानेर से करीब 30 किमी दूर देशनोक में माँ करणीमाता का मंदिर स्थित है। इस मंदिर में हजारों की संख्या में चूहे बिना डर के इधर–उधर घूमते रहते हैं। इन चूहों को स्थानीय लोग 'काबा' कहते हैं। यह करणी माता का चमत्कार माना जाता है कि हजारों की संख्या में चूहे होने पर भी यहाँ एक बार भी प्लेग नहीं फैला। करणी माता का मंदिर संगमरमर का बना हुआ है। करणी माता की मूर्ति के सिर पर मुकुट है और गले में माला है। भारत में ही नहीं अपितु विश्व में अकेले इस चूहों के मंदिर में चैत्र माह की नवरात्रि और आश्विन माह की नवरात्रि में दो बार मेला लगता है, जहां हजारों की संख्या में श्रद्धालु आते हैं। यह माना जाता है कि देशनोक की नींव माता के द्वारा ही पड़ी है। करणी माता के चमत्कारों के बारे में कई जनश्रुतियाँ प्रचलित है।

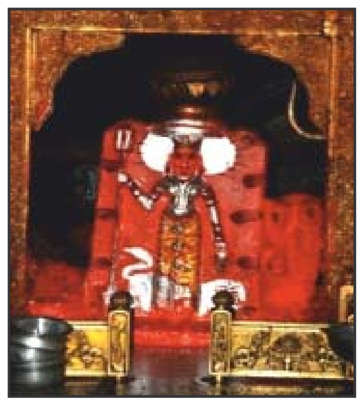
करणी माता

जीण माता—जीण माता शेखावाटी अंचल का एक प्रमुख शक्तिपीठ है। यह प्रसिद्ध शक्तिपीठ अरावली पर्वतमाला के बीच सीकर जिले से लगभग 32 किलोमीटर दूर रेवासा में स्थित है। जीण माता को माँ दुर्गा का अवतार माना जाता है और इनका असली और पूरा नाम जयन्तीमाला है, जिसका अपभ्रंश कालान्तर में जीण हो गया।

जीण माता

जीण माता अष्ट भुजा देवी है। मंदिर में देवी की सफेद संगमरमर की सुन्दर और भव्य प्रतिमा प्रतिष्ठापित है। इस देवी का उल्लेख भागवत् पुराण के नवें स्कन्ध में भी आया है।

यह शक्तिपीठ हजारों वर्ष पुराना है तथा मंदिर का कई बार जीर्णोद्धार तथा पुनर्निर्माण हुआ है। मंदिर का सभा मण्डप संगमरमर के 24 स्तम्भों पर आधारित है।

लोक मान्यता है कि चुरू जिले के धांधू गाँव की चौहान राजकन्या ने अपनी भावज के व्यंग्य बाणों और प्रताड़ना से व्यथित होकर सांसारिक जीवन छोड़कर आजीवन अविवाहित रहकर इस स्थान पर कठोर तपस्या की। चौहान राजकन्या के भाई हर्ष ने अपनी रूठी हुई बहिन से घर वापस जाने के लिए बहुत अनुनय–विनय की, पर वह न मानी। तब हर्ष ने भी कठोर तपस्या करना शुरू कर दिया। धीरे–धीरे जीण ने माँ दुर्गा का स्वरूप ले लिया और हर्ष भैरव के अवतार के रूप में प्रसिद्ध हुए। हर्ष और जीण से सम्बन्धित लोकगीत शेखावाटी में बहुत लोकप्रिय है। जीण माता अष्ठ भुजा वाली महिषासुर मर्दिनी के रूप में भी जानी जाती है।

ऐसी मान्यता है कि जीण माता का मंदिर हस्तिनापुर से निर्वासन के बाद पाण्डवों द्वारा यहां बनवाया गया। इस शक्तिपीठ पर चैत्र और आश्विन दोनों नवरात्राओं में देश–विदेश के श्रद्धालुओं की भारी भीड़ रहती है। देवी के चमत्कार की अनेक लोक कथाएं जनमानस में प्रचलित है।

त्रिपुरा सुन्दरी–माँ त्रिपुरा सुन्दरी का मंदिर बाँसवाड़ा से लगभग 19 किमी की दूरी पर स्थित है। इस शक्तिपीठ की लोक में बहुत मान्यता है। त्रिपुरा मतोपासना वैदिक काल के समकक्ष मानी जाती है और सम्पूर्ण भारत में इसका प्रसार था। आद्यजगद्गुरु शंकराचार्य के प्रयत्नों से भारतवर्ष में शक्ति उपासना की जो लहर उठी, उसी के परिणामस्वरूप देश में शक्ति पूजा का महत्त्व बढ़ा। इसी क्रम में बाँसवाड़ा का शक्तिपीठ भी त्रिपुरा सुन्दरी के नाम से प्रख्यात हुआ। राजस्थान के बांसवाड़ा–डूँगरपुर क्षेत्र में यह देवी तीर्थ ''तरतई माता'' के नाम से जाना जाता है। 'तरतई' शब्द 'त्रितयी' का अपभ्रंश है, जिसका अर्थ है– ''त्रित्व (तीन) से युक्त'।

माँ त्रिपुरा सुन्दरी

त्रिपुरा सुन्दरी के वर्तमान मन्दिर का जीर्णोद्धार सर्वप्रथम 12वीं शताब्दी में होने के कुछ उल्लेख मिलते हैं। मन्दिर को वर्तमान भव्य स्वरूप देने का कार्य 1977 ई. में प्रारम्भ किया गया। इससे पूर्व यह देवी तीर्थ उमराई गाँव के पास बीहड़ वन्य प्रदेश में झोपड़ीनुमा मन्दिर के रूप में अवस्थित था।

वर्तमान मन्दिर में गर्भ गृह में काले पत्थर की माँ त्रिपुरा की अष्टादश भुजाओं वाली भव्य प्रतिमा प्रतिष्ठित है। सिंहवाहिनी राजराजेश्वरी त्रिपुरा की 18 भुजाओं में दिव्य आयुध हैं। प्रतिमा के पृष्ठ–भाग के प्रभामण्डल में नौ छोटी–छोटी देवीमूर्तियाँ हैं। माँ के पृष्ठ भाग में योगिनियों की बहुत ही सुन्दर मूर्तियाँ अंकित हैं। मूर्ति के नीचे पेढ़ी पर श्रीचक्र अंकित है। माँ त्रिपुरा की उपासना श्रीचक्र पर की जाती है।

शाक्त ग्रन्थों में श्री महात्रिपुरसुन्दरी को जगत् का बीज और परम् शिव का दर्पण कहा गया है।

'कालिका पुराण' के अनुसार त्रिपुर शिव की भार्या होने से इन्हें त्रिपुरा कहा जाता है।

त्रिपुरा रहस्य आदि ग्रन्थों में त्रिपुरा सुन्दरी की कथा उल्लिखित है। एक बार भण्डासुर के उत्पात से जब जगत् त्रस्त हो गया, तब देवताओं के आग्रह पर भगवती आद्याशक्ति त्रिपुरासुन्दरी के रूप में प्रकट हुई। समस्त आसुरी शक्तियों के साथ युद्ध करने आए भण्ड दैत्य के साथ उनका भयंकर युद्ध हुआ और अन्त में भगवती त्रिपुरेश्वरी ने उसे भस्म कर दिया।

पंचाल समाज माँ त्रिपुरा की कुलदेवी के रूप में उपासना करता है। 14 चोखला पंचाल समाज ने यहां 2006 में स्वर्ण कीर्ति स्तम्भ बनवाया। वर्तमान में समाज की देख–रेख में भव्य मंदिर का निर्माण प्रगति पर है।

गतिविधि–
राजस्थान के अन्य महत्वपूर्ण लोक शक्तिपीठों से संबंधित कथानक, प्रसंगों और चित्रों का संकलन कीजिए।

लोक वाद्य यंत्र

लोकजीवन को सरस बनाने एवं उसे नई ऊर्जा पैदा करने में वाद्य यंत्रों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। राजस्थान में पाये जाने वाले कतिपय लोक वाद्य यंत्रों की यहां जानकारी प्रदान की जा रही है।

वाद्य यंत्रों का वर्गीकरण

अवनद्य (चमड़े से युक्त)	घन (धातु से बना)	तत् (तार लगे हुए)	सुषिर (फूंक से बजने वाले)
1.चंग	1. मंजीरा	1. सारंगी	1. अलगोजा
2.भपंग	2. खड़ताल	2. तंदूरा	2. शहनाई
3.मादल	3. ताशा	3. जन्तर	3. पूंगी
4.नगाड़ा		4. रावणहत्था	4. तुरही
5.इकतारा			

1. **इकतारा**–यह प्राचीन वाद्य है। गोल तूंबे में एक बांस फंसा दिया जाता है। तूंबे का ऊपरी हिस्सा काटकर उस पर चमड़ा मढ दिया जाता है। बांस में छेदकर उसमें खूंटी लगाकर उसमें एक तार कस दिया जाता है। इस तार को अंगुली से बजाया जाता है। यह वाद्य यंत्र एक हाथ से ही बजाया जाता है। मीराबाई इकतारा ही बजाती थी।
2. **भपंग**– यह वाद्य कटे हुए तूंबे से बना होता है, जिसके एक सिरे पर चमड़ा मढा होता है। चमड़े में एक छेद निकालकर उसमें जानवर की आंत का तार या प्लास्टिक की डोरी डालकर उसके सिरे पर लकड़ी का एक टुकड़ा बांध दिया जाता है। वादक इस वाद्य को कांख में दबाकर एक हाथ से उस डोरी या तांत को खींचकर या ढीला छोड़कर उस पर दूसरे हाथ से लकड़ी के टुकड़े से प्रहार करता है। अलवर क्षेत्र में, विशेषकर मेव लोगों में, यह वाद्य काफी प्रचलित है।

3. **सारंगी–** राजस्थान में सारंगी के विविध रूप दिखाई देते हैं। मिरासी, लंगा, जोगी, मांगणियार आदि कलाकार सारंगी के साथ ही गाते हैं। सारंगी सागवान, कैर तथा रोहिड़ा की लकड़ी से बनाई जाती है। सारंगी के तार बकरे की आंत के और गज में घोड़े की पूँछ के बाल बंधे होते हैं। सारंगी की तरह ही कमायचा, सुरिन्दा और चिकारा वाद्य हैं।
4. **तंदूरा**–इसमें चार तार होने के कारण कहीं–कहीं इसे चौतारा भी कहते हैं। यह पूरा लकड़ी का बना होता है। कामड़ जाति के लोग तंदूरा ही बजाते हैं। यह तानपुरे से मिलता–जुलता वाद्य है।
5. **जंतर–** यह वाद्य वीणा की तरह होता है। वादक इसको गले में डालकर खड़ा–खड़ा ही बजाता है। वीणा की तरह इसमें दो तूंबे होते हैं। इनके बीच बांस की लम्बी नली लगी होती है। इसमें कुल चार तार होते हैं। राजस्थान में यह गूजर भोपों का प्रचलित वाद्य है।
6. **रावण हत्था–** रावण हत्था भोपों का मुख्य वाद्य है। इसे बनाने के लिए नारियल की कटोरी पर खाल मढी जाती है, जो बांस के साथ लगी होती है। बांस में जगह–जगह खुंटियाँ लगा दी जाती है, जिनमें तार बंधे होते हैं। यह वायलिन की तरह गज से बजाया जाता है, जिसमें एक सिरे पर कुछ घुंघरू बंधे होते हैं। बजाते समय हाथ के ठुमके से घुंघरू भी बजते हैं।
7. **अलगोजा–** यह फूंक वाद्य है। यह बांसुरी की तरह होता है। वादक दो अलगोजे मुंह में रखकर एक साथ बजाता है। एक अलगोजे पर स्वर कायम किया जाता है तथा दूसरे पर स्वर बजाये जाते है।
8. **शहनाई–** यह एक मांगलिक वाद्य है। चिलम की आकृति का यह वाद्य शीशम या सागवान की लकड़ी से बनाया जाता है। वाद्य के ऊपरी सिरे पर ताड़ के पत्ते की तूंती बनाकर लगाई जाती है। फूंक देने पर इसमें से मधुर स्वर निकलता है।
9. **पूंगी–** यह वाद्य एक विशेष प्रकार के तूंबे से बनता है। तूंबे का ऊपरी हिस्सा लंबा और पतला तथा नीचे का हिस्सा गोल होता है। तूंबे के निचले गोल हिस्से में छेदकर दो नलियां लगाई जाती है। इन नलियों में स्वरों के छेद होते हैं। अलगोजे के समान ही एक नली में स्वर कायम किया जाता है और दूसरी से स्वर निकाले जाते हैं। कालबेलियों का यह प्रमुख वाद्य है।
10. **नगाड़ा–** यह दो प्रकार का होता है; एक छोटा और दूसरा बड़ा। छोटे नगाड़े के साथ नगाड़ी भी होती है। इसे लोकनाट्यों में शहनाई के साथ बजाया जाता है। लोक नृत्यों में नगाड़े की संगत के बिना रंगत ही नहीं आती है। बड़ा नगाड़ा धातु की लगभग चार–पांच फुट गहरी अर्द्ध अंडाकार कुंडी को भैंसे की खाल मंढकर चमड़े की डोरियों से कसा जाता है। इसे बम या टामक भी कहते हैं। यह युद्ध के समय रणभेरी के रूप में बजाया जाता था। इसे लकड़ी के डंडों से बजाया जाता है।
11. **ढोल–** राजस्थानी लोकवाद्यों में ढोल का प्रमुख स्थान है। यह लोहे या लकड़ी के गोल घेरे पर दोनों तरफ चमड़ा मंढकर बनाया जाता है। इस पर लगी रस्सियों को कड़ियों के सहारे खींचकर इसे कसा जाता है। वादक इसे गले में डालकर लकड़ी के डंडों से बजाता है।
12. **मांदल–** मिट्टी से बनी मांदल का आकार ढोलक जैसा होता है। इस पर हिरण या बकरे की खाल मंढ़ी होती है। यह वाद्य भीलों और गरासियों का प्रमुख वाद्य हैं।

13. चंग– होली के अवसर पर बजाया जाने वाला यह ताल वाद्य लकड़ी के गोल घेरे से बना होता है। इसके एक तरफ बकरे की खाल मंढ़ी जाती है। इसे दोनों हाथों से बजाया जाता है। इसे ढप भी कहते हैं।

14. खंजरी– यह ढप का लघु आकार है। ढप की तरह इस पर भी चमड़ा मंढा होता है। इसे कामड़, भील, कालबेलिया आदि बजाते है।

शहनाई

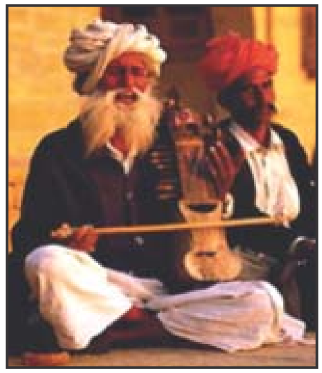

सारंगी

भपंग

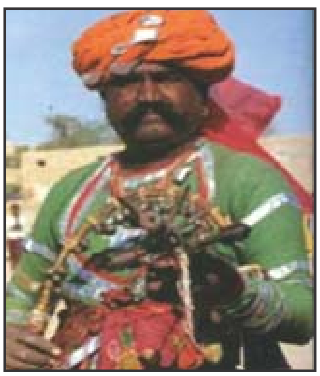

रावणहत्था

नगाड़ा

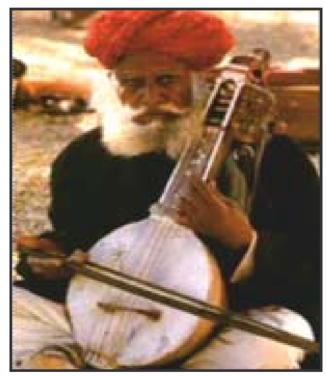

कमायचा

मोरचंग

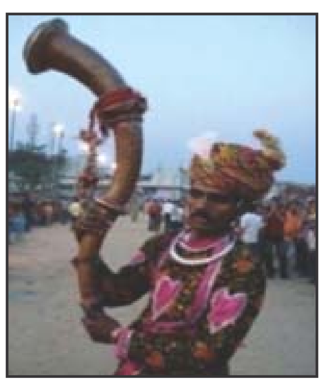

तुरही

ढोल

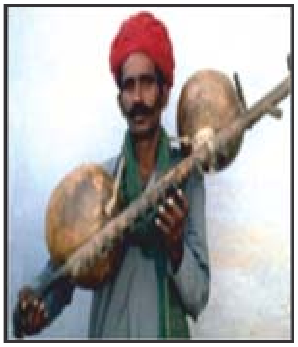
जंतर

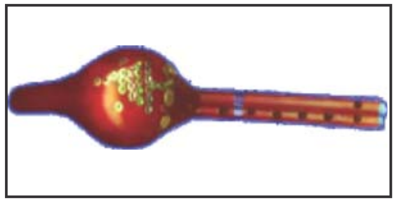
पूंगी

खंजरी

अलगोजा

तंदूरा

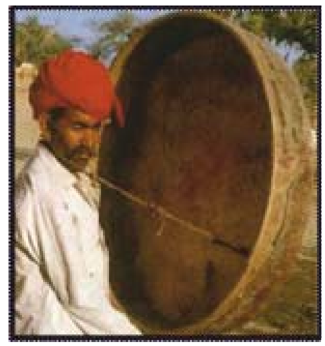
चंग

मांदल

इकतारा

बांकिया

खड़ताल

गतिविधि –

आपके अंचल में प्रचलित और कौन–कौन से लोक वाद्य है?इनके चित्रों सहित इन वाद्यों की जानकारी संकलित कीजिए।

इसके अलावा भी राजस्थान में अनेक लोक वाद्य प्रचलित हैं। इनमें मोरचंग, चिकारा, तुरही, खड़ताल, मंजीरा, झांझ, कांसी की थाली, बांकिया, भूंगल, मशक, ताशा, नौबत, धौंसा, ढोलक, डैरूं आदि उल्लेखनीय है। ये वाद्य राजस्थान के जनजीवन में इस प्रकार रच–बस गए हैं कि इनका प्रत्येक स्वर यहाँ की माटी और संस्कृति की गंध लिए हुए होता है।

प्रमुख लोकनृत्य

मस्ती, उल्लास और आनन्द के अतिरेक में की गई थिरकन ही नृत्य है। राजस्थान एक

भौगोलिक विविधता वाला प्रदेश है। इस विविधता ने नृत्यों को भी वैविध्य प्रदान किया है और अलग–अलग क्षेत्रों में भिन्न–भिन्न नृत्य विकसित हुए हैं।

1. **गैर नृत्य–** गोल घेरे में इस नृत्य की संरचना होने के कारण यह 'घेर' और कालान्तर में 'गैर' कहा जाने लगा। होली के दिनों में मेवाड़ और बाड़मेर में इस नृत्य की धूम मची रहती है। इस नृत्य की सारी प्रक्रियाएं और पद संचालन तलवार युद्ध और पट्टेबाजी जैसी लगती है। यह केवल पुरूषों का नृत्य है। मेवाड़ और बाड़मेर में गैर नृत्य की मूल रचना एक ही प्रकार की है, किन्तु नृत्य की लय, चाल और मण्डल में अन्तर होता है।

गैर नृत्य

2. **गींदड़ नृत्य–** यह शेखावाटी का लोकप्रिय नृत्य है। सुजानगढ़, चुरू, रामगढ़, लक्ष्मणगढ़, सीकर और उसके आसपास के क्षेत्रों में यह लोकप्रिय है। नगाड़ा इस नृत्य का मुख्य वाद्य यंत्र होता है। इसमें नृतक अपने हाथ में छोटे डंडे लिए हुए होते हैं। नगाड़े की ताल के साथ इन डंडों को टकराकर नर्तक नाचने लगते हैं। जैसे–जैसे नृत्य गति पकड़ता है, नगाड़े की ध्वनि भी तीव्र होती चली जाती है। इस नृत्य में विभिन्न प्रकार के स्वांग भी निकाले जाते हैं, जिनमें साधु, शिकारी, सेठ–सेठानी, दुल्हा–दुल्हन आदि उल्लेखनीय हैं।

3. **चंग नृत्य–** यह पुरुषों का नृत्य है। इस नृत्य में हरेक पुरुष के पास चंग होता है और वह चंग बजाता हुआ गोल घेरे में नृत्य करता है। नृत्य करते हुए लय के साथ चंग बजाते हुए नर्तक अपने स्थान पर चक्कर लगाता है। इसमें चंग के साथ बाँसुरी का भी प्रयोग होता है। इस नृत्य में धमाल तथा होली के गीत गाए जाते हैं। इस नृत्य में अंग संचालन काफी मनोहारी होता है।

चंग नृत्य

4. **डांडिया नृत्य–** यह मारवाड़ का लोकप्रिय नृत्य है। गैर, गींदड और डांडिया तीनों ही नृत्य वृत्ताकार हैं। डांडिया नृत्य में पुरुषों की टोली हाथ में लंबी छड़ियाँ लेकर नाचती है। इसमें शहनाई और नगाड़ा बजाया जाता है। नर्तक आपस में डांडियां टकराते हुए घेरे में नृत्य करते हैं।

5. **ढोल नृत्य–** यह जालोर का प्रसिद्ध नृत्य है। यह भी पुरुषों द्वारा ही किया जाता है। इसमें एक साथ चार या पाँच ढोल बजाए जाते हैं। इसमें पहले मुखिया ढोल बजाता है फिर अन्य नर्तक, कोई मुँह में तलवार लेकर, कोई हाथों में डण्डे लेकर, कोई रूमाल लटकाकर नृत्य करते हैं। यह नृत्य प्रायः विवाह के अवसर पर किया जाता है।

6. **अग्नि नृत्य–** धधकते अंगारों पर किया जाने वाला यह नृत्य जसनाथी सम्प्रदाय के लोग करते हैं। यह नृत्य रात्रि में आयोजित

ढोल नृत्य

होता है। इस नृत्य में नर्तक कई बार अंगारों के ढेर को नाचते हुए पार करता है। इतना ही नहीं ये नर्तक उन अंगारों को कभी हाथ में उठाते हैं, मुँह में डालते हैं और कभी उनकी झोली भरकर नाना प्रकार के करतब करते हैं। नर्तक अग्नि से इस प्रकार खेलते है जैसे अंगारों से नहीं फूलों से खेल रहे हो।यह नृत्य भी पुरुषों द्वारा ही किया जाता है।

अग्नि नृत्य

7. **बमरसिया नृत्य–** यह अलवर और भरतपुर क्षेत्र का नृत्य है। इस नृत्य में एक बड़े नगाड़े का प्रयोग होता है। इसे दो आदमी बड़े डंडों की सहायता से बजाते हैं और नर्तक रंग–बिरंगे फूंदों तथा पंखों से बंधी लकड़ी को हाथों में लिए उसे हवा में उछालते हुए नाचते हैं। वाद्य यंत्रों में नगाड़े के अलावा थाली, चिमटा, ढोलक, खड़ताल और मंजीरा आदि का प्रयोग किया जाता है। नृत्य के साथ होली के गीत और रसिया गाया जाता है। बम (नगाड़े) के साथ रसिया गाने से इस नृत्य का नाम बमरसिया प्रसिद्ध हो गया।

8. **घूमर नृत्य–** यह समूचे राजस्थान का लोकप्रिय नृत्य है। यह नृत्य मांगलिक अवसरों तथा पर्वोत्सवों पर आयोजित होता है। यह महिलाओं का नृत्य है। इसमें लहंगा पहने स्त्रियाँ जब चक्कर लेकर गोल घेरे में नृत्य करती है तो उनके लहंगे का घेर और हाथों का लचकदार संचालन देखते ही बनता है।

घूमर

9. **तेरहताली नृत्य–** यह कामड़ जाति का अनोखा नृत्य है। यह नृत्य ही ऐसा है जो बैठकर किया जाता है। इसमें स्त्रियां अपने हाथ–पैरों में मंजीरे बांध लेती है और फिर दोनों हाथों से डोरी से बंधे मंजीरों को द्रुतगति की ताल और लय से शरीर पर बंधे मंजीरों पर प्रहार करती हुई विविध प्रकार की भाव–भंगिमाएँ प्रदर्शित करती है। यह चंचल और लचकदार नृत्य देखते ही बनता है। पुरूष तंदूरे की तान पर मुख्यतया रामदेवजी के भजन गाते हैं।

10. **भवाई नृत्य–** यह नृत्य अपनी चमत्कारिता के लिए अधिक प्रसिद्ध है। इस नृत्य में विभिन्न शारीरिक करतब दिखाने पर अधिक बल दिया जाता है। यह उदयपुर संभाग में अधिक प्रचलित है। अनूठी नृत्य अदायगी, शारीरिक क्रियाओं के अद्भुत चमत्कार तथा लयकारी की विविधता इस नृत्य की मुख्य विशेषताएँ हैं। तेज लय में सिर पर सात–आठ मटके रखकर नृत्य करना, जमीन पर पड़े रूमाल को मुँह से उठाना, गिलासों पर नाचना, थाली के किनारों पर नृत्य करना, तलवार की धार पर, कांच के टुकड़ों पर और नुकीली कीलों पर नृत्य करना इस नृत्य को रोमांचक बनाता है।

भवाई नृत्य

11. गवरी नृत्य– यह मेवाड़ में भीलों द्वारा किया जाने वाला प्रसिद्ध नृत्य है। मांदल और थाली की थाप पर गवरी नृत्य में कई स्वांगों का प्रदर्शन होता है। राई और बूडिया इसके प्रमुख पात्र है। राखी के दूसरे दिन यानी भाद्रपद की एकम् से लेकर 40 दिनों तक यह नृत्य किया जाता है। इस अवधि में गवरी नृत्य करने वाले ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते है, व्यसनों से दूर रहते हैं, हरी शाक नहीं खाते हैं तथा जमीन पर सोते हैं। गवरी नृत्य मां 'गोरज्या' (माँ पार्वती देवी या गौरी) की आराधना के लिए किया जाता है। 40 दिनों के बाद 'गलावण' और 'वलावण' की रस्म के साथ गवरी नृत्य को विराम दिया जाता है। यह नृत्य सिर्फ पुरुषों द्वारा किया जाता है और महिला पात्र भी पुरुष ही बनते है।

12. कालबेलिया नृत्य– राजस्थान में सपेरा जाति का यह एक प्रसिद्ध नृत्य है। इस नृत्य में शरीर की लोच और लय, ताल पर गति का मंत्रमुग्ध कर देने वाला तालमेल देखने को मिलता है। अधिकतर इसमें दो बालाएँ अथवा महिलाएँ बड़े घेरे वाला घाघरा और घुंघरू पहनकर नृत्य प्रस्तुति देती है। नृत्यांगना काले रंग की कशीदाकारी की गई पोशाक पहनती है, जिस पर कांच, मोती, कोड़ियाँ, कपड़े की रंगीन झालर आदि लगे होते हैं। नृत्य में पुरुषों द्वारा पूंगी और चंग बजाई जाती है। दूसरी महिलाएं गीत गाकर संगत देती है। मारवाड़ अंचल में यह नृत्य काफी लोकप्रिय है। हाल ही में इस नृत्य को यूनेस्को (UNESCO) द्वारा सूचीबद्ध किया गया है।

कालबेलिया नृत्य

इसके अलावा कच्छी घोड़ी नृत्य, कंजर बालाओं का चकरी नृत्य, चरी नृत्य और चिरमी नृत्य भी आकर्षक है।

गतिविधि–

आपके क्षेत्र में किए जाने वाले लोक नृत्य और नृत्य के दौरान गाए जाने वाले गीतों की सचित्र जानकारी संकलित कीजिए।

इसके साथ ही वर्षभर में लगने वाले मेले, संगीत विधा से जुड़ी पारंपरिक जातियाँ और घराने, लोक नाट्य, ख्याल गायकी, मांडणे, मेहन्दी, सांझी, गोदना, हस्तकला आदि राजस्थानी संस्कृति को और अधिक मोहकता प्रदान करते हैं। इन सबमें राजस्थानी माटी की महक रची–बसी है।

राजस्थान संगीत संस्थान जयपुर, राजस्थान संगीत नाटक अकादमी जोधपुर, जयपुर कत्थक केन्द्र जयपुर, भारतीय लोक कला मण्डल उदयपुर, रवीन्द्र मंच जयपुर, पश्चिम सांस्कृतिक केन्द्र (शिल्पग्राम) उदयपुर, जवाहर कला केन्द्र जयपुर, राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर और कई संग्रहालय हमारी लोक संस्कृति के वाहक और संरक्षक है।

शब्दावली

ख्यात	–	इतिहास
परिसर	–	क्षेत्र
पर्यटक	–	भ्रमण करते लोग
मांगलिक	–	शुभ
भावज	–	भाई की पत्नी; भाभी

अभ्यास प्रश्न

1. भाग 'अ' को भाग 'ब' से सुमेलित कीजिए–

भाग अ	भाग ब
क. जीण माता	बाँसवाड़ा
ख. कैला देवी	जयपुर
ग. त्रिपुरा सुन्दरी	करौली
घ. जमवाय माता	बीकानेर
ङ करणी माता	सीकर

2. 'तरतई' शब्द का क्या अर्थ है?
3. कैला देवी के मेले में कौनसा विशेष नृत्य किया जाता है?
4. शहनाई वाद्य यंत्र किससे बनाया जाता है?
5. राजस्थान में प्रचलित लोक वाद्य यंत्रों का वर्गीकरण कीजिए।
6. राजस्थान में लोक संस्कृति के संरक्षक संस्थान कौन–कौन से हैं ?
7. राजस्थान के प्रमुख शक्तिपीठों का वर्णन कीजिए।
8. राजस्थान के प्रमुख वाद्य यंत्रों का वर्णन कीजिए।
9. राजस्थान के प्रमुख लोक नृत्यों का वर्णन कीजिए।

गतिविधि–

1. राजस्थान की लोक देवियों के संबंध में प्रचलित आख्यानों, जन मान्यताओं, जनश्रुतियों को सूचीबद्ध कीजिए।
2. राजस्थान के लोक नृत्यों को विद्यालय के सांस्कृतिक कार्यक्रमों में प्रस्तुत करें।
3. राजस्थान के लोक देवताओं के चित्रों का संकलन करें।
4. लोक वाद्यों को देखने के लिए विद्यार्थी अपने अध्यापक के साथ किसी संग्रहालय का भ्रमण करें।